भक्ति और कला के संगम का जैन तीर्थ चतुर्मुख जिनप्रासाद

श्री राणकपुर महातीर्थ

सेठ आणंदजी कल्याणजी (धार्मिक धर्मादा ट्रस्ट), अहमदाबाद.

स्तभांवली का सौंदर्य

प्रकाशक : कर्नल गौतम शाह : जनरल मेनेजर, सेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट,
श्रेष्ठी लालभाई दलपतभाई भवन, 25. वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड,
पालडी, अहमदाबाद - 380 007 (गुजरात)
Phone : 079 2664 4502, 2664 5430 Fax : 079 - 2660 8244
E-mail : shree_sangh@yahoo.com
नकल : 5000
पुनर्मुद्रण : आठवाँ संवर्द्धित संस्करण : दिसम्बर 2013
मुद्रक : नवनीत प्रिन्टर्स, अहमदाबाद. मो. : 9825261177
मूल्य : ₹ 20/-

लहलहाते ध्वज के साथ उत्तुंग शिखर का मनोहारी द्रश्य

भक्ति और कला के संगम का तीर्थ

श्री राणकपुर

राणकपुर का मन्दिर ''कला कला के लिए'' के पार्थिव सिद्धान्त के बजाए ''कला जीवन के लिए'' के उमदा गंभीर सिद्धान्त का एक श्रेष्ठ दृष्टान्त है – मानो अपने जीवन का सारसर्वस्व परमात्मा के चरणों में भेंट चढ़ाकर मानव अपने जीवन को कृतकृत्य मानता है।

हृदयंगम व सुरम्य कला के विपुल भंडार–सा यह सुप्रसिद्ध जैन श्वेताम्बर तीर्थस्थल पश्चिम रेलवे के फालना स्टेशन से ३५ किलोमीटर की दूरी पर आया हुआ है। ऊँचे स्तर पर खड़ा किया गया यह मन्दिर तिमंजिला है। यह जिनालय अपनी ऊँचाइ से पीछे की ओर स्थित ऊँची–ऊँची पहाड़ियों के साथ घुलमिलकतर मानो आकाश से बातें करता हो ऐसा आभास होता है। जैसे जैसे ऊपर जाते हैं, मन्दिर के ऊपर के मंजिलों की ऊँचाई क्रमशः कम होती जाती है, किन्तु जिनालय की शोभा व भक्त की भावना बढ़ती जाती है। पूरा मन्दिर सुकुमार व उज्जवलता की निधिसमान संगमरमर के पत्थरों से बनाया गया है।

कल–कल नाद से बहते निर्मल झरने के समान नन्ही–सी मघाई नदी, स्थिर आसन लगाकर बैठे हुए आत्मसाधकों–सी अरावली गिरिमाला की छोटी छोटी पहाड़ियाँ और शांत, एकांत तथा निर्जन अरण्य प्रकृति–इस त्रिविध सौन्दर्य के बीच राणकपुर का सुविशाल, गगनचुंबी, भव्य जिनप्रासाद देखते हैं तो लगता है कोई खेलकूद करता सुहावना बालक अपनी तेजस्वी, स्नेहिल माता की प्यारभरी गोद में हँसता–खेलता कलशोर मचा रहा हो, वैसा अनुभव होता है।

प्रकृति का सहज सौन्दर्य तथा मानव–निर्मित कला–सौन्दर्य का जब सुभग समन्वय सध जाता है, तब कैसा सुन्दर, अपूर्व योग बनता है, मानव के चित्त को कितना आह्लादित करता है और भक्त की भावनाओं को कितना छू जाता है, इसका प्रत्यक्ष उदाहरण राणकपुर का तीर्थ है।

आलीशान जिन मंदिर का विशाल द्रश्य

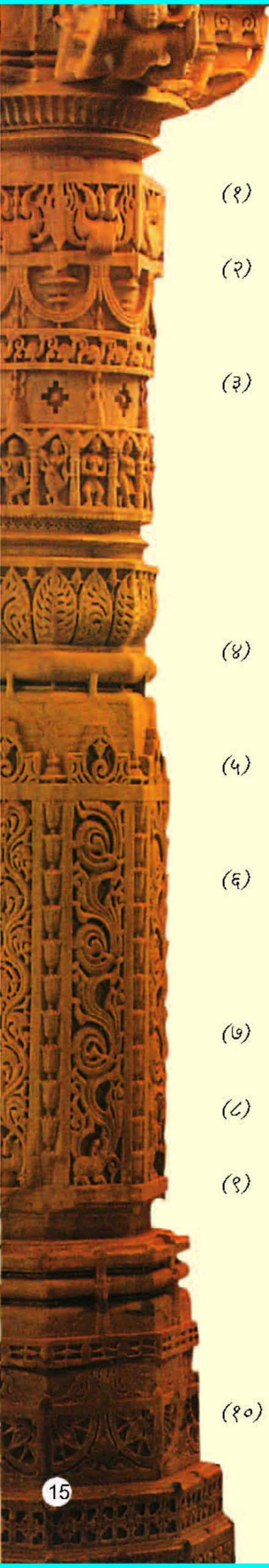

पेढी के द्वारा विशेष रुप से तैयार की गयी राणकपुर ओडियो गाईड़ के महत्वपूर्ण अंश

(१) राणकपुर महातीर्थ में स्थित जैनश्वेताम्बर मन्दिर का निर्माण इ.स. १४९६ में हुआ। यह एक संगमरमर के पत्थरों में तराशी हुई कला-स्थापत्य एवं जैन धर्म की मानो गौरव गाथा है।

(२) जैन धर्म विश्व के प्राचीनतम धर्मों में से एक है। 'जिन' शब्द का अर्थ है जिसने स्वयं को जीत लिया है। राग और द्वेष से मुक्त आत्माओं को जिन कहा जाता है और उनके अनुयायी "जैन" कहलाते हैं।

(३) मंदिरजी की भव्यता एवं सुंदरता से हर एक व्यक्ति मंत्रमुग्ध हो उठता है। देखिये छत की और... पांच सिर और एक शरीरवाला राक्षस जो कि पांच बुराईयों का मिलाजुला प्रतीक है। ये बुराईया है... क्रोध, मोह, लालच, नशा और कामुकता। इस आकृति को 'कीचक' कहते हैं।

सीढियों की उपरी हिस्से की छत पर लता जैसा नक्काशीदार एक गोल प्रतीक दिखायी पड़ेगा। इसे कहते है कल्पवल्ली। शायद यह राणकपुर के सुंदरतम शिल्प में से एक है। सामान्य निगाहों में यह एक सामान्य लता सी दिखायी देती है पर ध्यान से देखने पर यह पवित्र प्रतीक ॐ का आकार लेती है।

(४) यह मंदिर मेवाड महाराणा के दरबार में मंत्रीपद पर स्थित धरणाशाह का स्वप्न-सर्जन है। उन्होनें देखे हुए स्वप्न नलिनीगुल्म विमान की हूबहू प्रतिकृति से इस मंदिर को बनाने के लिए धरणाशाह ने अपने गुरुदेव आचार्य सोमसुन्दरसूरिजी के आशीर्वाद प्राप्त किये थे।

(५) एक हाथ में लम्बी पट्टी और दूसरे हाथ में जल कलश लिये हुए खड़ी आकृति देपा शिल्पी की है। समीप के गाँव मुंडारा के रहनेवाले देपा शिल्पी ने ही राणकपुर के इस भव्य जिनालय का निर्माण धरणाशाह के स्वप्न को साकार करते हुए किया।

(६) वि.सं. १४४६ में प्रारंभ हुए इस मंदिर का निर्माण पच्चीससों कारीगरों की मेहनत, लगन व धीरज का परिणाम है। १४४४ खंभों की विशेषता लिए यह मंदिर ४८ हजार वर्ग फीट की जगह में सोनाणा और सेवाड़ी के पत्थरों से निर्मित है इस मंदिर की बुनियाद - नींव १० मीटर जितनी गहरी रखी गयी थी।

(७) समूचा यह मंदिर चतुर्मुख के सिद्धांत पर आधारित है और इसीलिए चारों दिशा में प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ की एक सी चार प्रतिमाए बिराजमान की गयी है।

(८) एक शिल्पकृति में प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव जो कि आदिनाथ के नाम से भी जाने जाते है... उनकी माता मरुदेवी हाथी के औहदे पर आरुढ होकर अपने बेटे के दर्शन के लिए जाती दिखायी देती है।

(९) जैन धर्म में चौबीस तीर्थंकर हुए हैं। जिनमें प्रथम ऋषभदेव एवं अंतिम चौबीसवें महावीर स्वामी है। प्रत्येक तीर्थंकर की पहचान के लिए अलग अलग लांछन अथवा चिह्न की अवधारणा है... जैसे कि भगवान ऋषभदेव का लांछन है वृषभ और भगवान महावीर का लांछन है सिंह।

तीर्थंकर आदिनाथ पहले तीर्थंकर, प्रथम राजा, प्रथम मुनि थे। उन्होनें सर्वप्रथम मानवीय संस्कृति की स्थापना की। पारिवारिक व्यवस्था, राज्य-अनुशासन जैसे सिद्धांत उन्होनें प्रस्थापित किये।

(१०) रंगमंडप - मुख्य हॉल के तुरंत बाद का विस्तार गर्भगृह के रुप में जाना जाता है। इसका अर्थ है सृजन केन्द्र! यह एक पवित्र जगह है। यहाँ पर चारों और भव्य तोरण मौजूद है। सजावटी

त्रैलोक्य दीपक प्रसाद

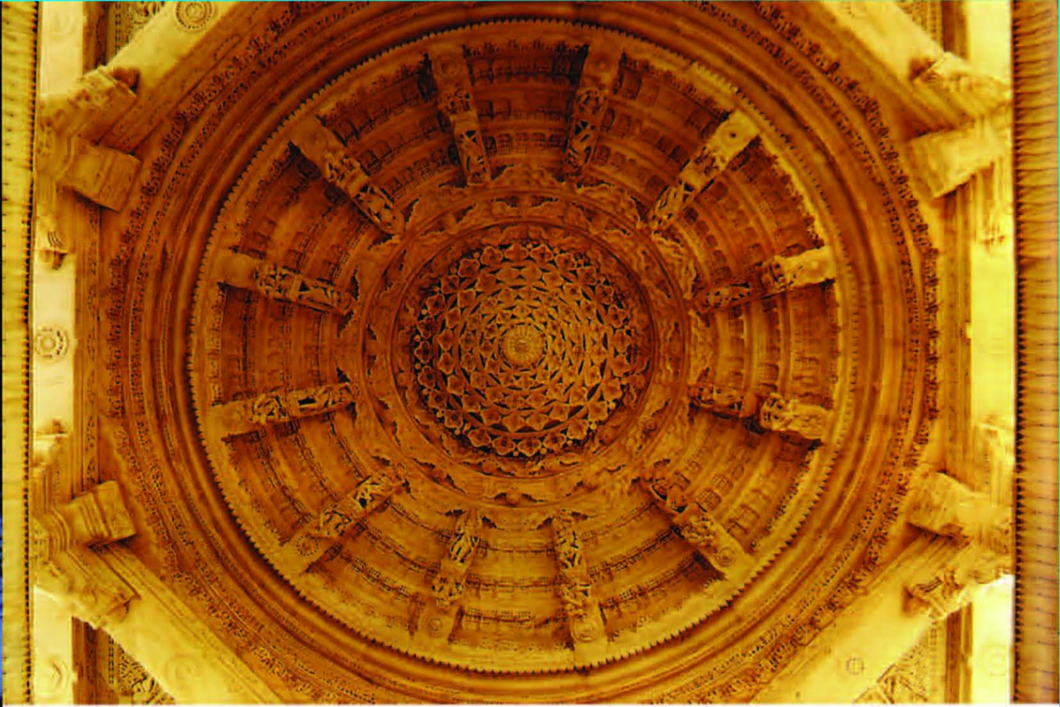

छत की नक्काशी का नयनरम्य द्रश्य

वैसे भी राजस्थान तो शिल्प-स्थापत्य की विपुलता व विविधता से भरा-भरा प्रदेश है। यहाँ के कतिपय कलापूर्ण स्थापत्य तो विश्व के विख्यात शिल्पों में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त करें, वैसे अद्‌भूत है। इन सब में गिरिराज आबू के जिनालय तो बेजोड़ है ही, फिर भी विशालता व कलात्मकता के संगम की द्रष्टि से राणकपुर का यह जिनमन्दिर उन सब में, निःसंदेह, श्रेष्ठतर बना रहे ऐसा है; साथ ही साथ भारतीय शिल्पकला का भी यह बेजोड़ नमूना है। और भारतीय वास्तुविद्या कितनी उच्च कोटि की व बढ-चढकर थी और इस देश के स्थपति कैसे सिद्धहस्त थे, इस बात का यह तीर्थ प्रत्यक्ष प्रमाण है।

इस मन्दिर की निर्माण-कथा के चार मुख्य स्तंभ है : आचार्य सोमसुन्दरसूरि, मंत्री धरणाशाह, पोरवाल, राणा कुंभा और शिल्पी देपा या देपाक। इन चारों की भावनारूप चार स्तंभों के आधार पर शिल्पकला के सौन्दर्य की पराकाष्ठा के समान इस अद्‌भूत जिनमन्दिर का निर्माण संभव हुआ था।

आचार्य सोमसुन्दरसूरि विक्रम की पन्द्रहवीं सदी के एक प्रभावशाली आचार्य थे। श्रेष्ठी धरणाशाह राणकपुर के समीपस्थ नांदिया गाँव के निवासी थे। बाद में वे मालगढ़ में जा बसे थे। इनके पिता का नाम श्रेष्ठी कुरपाल, माता का नाम कामलदे, और बड़े भाई का नाम रत्नाशाह था। वे पोरवालवंशीय थे।

तत्कालीन प्रभावक पुरुष जैन आचार्य श्री सोमसुन्दरसूरिजी के संपर्क से धरणाशाह विशेष धर्मपरायण बने और कालक्रम से उनकी धर्मभावना में ऐसी अभिवृद्धि होती गई कि, केवल बत्तीस वर्ष की युवावस्था में ही उन्होने, तीर्थाधिराज शत्रुंजय में, आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत जैसे कठिन व्रत को अंगीकार किया था। अपनी कुशाग्र बुद्धि, कार्यशक्ति और राजनैतिक क्षमता के बल पर वे मेवाड़ के राणा कुंभा के मंत्री बने थे।

भव्य शिखर का सुन्दर स्थापत्य

इस मन्दिर को ''चतुर्मुख प्रासाद'' के अलावा ''धरणविहार'', ''त्रैलोक्य दीपक प्रासाद'' एवं ''त्रिभुवन-विहार'' के नाम से भी पहचाना जाता है। इसके निर्माता श्रेष्ठी धरणाशाह होने से इसका ''धरणविहार'', तीन लोक में यह दीपक समान होने से ''त्रैलोक्य-दीपक-प्रासाद'' तथा ''त्रिभुवनविहार'' नाम सार्थक है। और ये सब नाम इस मन्दिर की महिमा के सूचक हैं।

पर इस मन्दिर का सबसे जानदार वर्णन तो, इसे स्वर्गलोक के नलिनीगुल्म विमान की उपमा दी गई है, उस में समाया हुआ है। मन्दिर का निरीक्षण करनेवाला यात्री मानो स्वयं किसी सुरम्य स्वप्नप्रदेश में पहुँच गया हो और वहाँ किसी स्वर्गीय विमान के सौन्दर्य-वैभव को निहार रहा हो, ऐसे संवेदन का उसे अहसास होता है। चित्त को उन्नत प्रदेश में विचरण कराना यही तो भक्ति और कला की चरितार्थता है।

जिनालय की भीतरी भव्यता का नजारा

किसी शुभ क्षण में मंत्री धरणाशाह के हृदय में भगवान ऋषभदेव का एक भव्य मन्दिर बनवाने की भावना जगी। यह मन्दिर शिल्पकला का उत्कृष्ट नमूना और सर्वांगसुन्दर बने ऐसी उनकी मनोकामना थी। एक जनश्रुति तो ऐसी भी है कि, मंत्री धरणाशाह ने, एक बार रात्रि के समय सुन्दर स्वप्न देखा और उसमें उन्होंने स्वर्गलोक के नलिनीगुल्म विमान के दर्शन किये। नलिनीगुल्म विमान स्वर्गलोक का सर्वांग-सुन्दर विमान माना जाता है। धरणाशाह ने निश्चय किया कि मुझे ऐसा ही मनोहारी जिनप्रासाद बनवाना है।

फिर तो, उन्होंने अनेक शिल्पियों से मन्दिर के नक्शे मँगवाये। आखिर मुन्डारा गाँव के निवासी शिल्पी देपा का बनाया हुआ चित्र श्रेष्ठी के मन में समा गया। शिल्पी देपा मस्तमिजाजी और मनमौजी कलाकार था। अपनी कला के गौरव व बहुमान की रक्षा के लिए वह गरीबी में भी सुख से निर्वाह कर लेता था। मंत्री धरणाशाह की स्फटिक-सी निर्मल धर्मभक्ति देपा के अन्तर को छू गई। और उसने मंत्री की मनोगत भावना को साकार कर सके ऐसा मनोहर, विशाल व भव्य जिनमन्दिर निर्माण करने का बीड़ा उठा लिया - मानो धर्मतीर्थ के किनारे पर भक्ति और कला का सुन्दर संगम हुआ हो।

मंत्री धरणाशाह ने राणा कुंभा के पास मन्दिर के लिये जमीन की माँग की। राणाजी ने मन्दिर के लिये उदारता से जमीन भेंट दी और साथ ही साथ वहाँ एक नगर बसाने की भी सलाह दी। इसके लिये माद्री पर्वत की तलहटी में आये हुए प्राचीन मादरी गाँव की भूमि पसन्द की गई। इस प्रकार मन्दिर के साथ ही साथ वहाँ नया नगर भी खड़ा हुआ। राणा के नाम पर से ही उस नगर का नाम 'राणपुर' रखा गया। बाद में लोगों में वही "राणकपुर" के नाम से अधिक प्रसिद्ध हुआ।

संगीतमय नृत्यरत देवांगनाएं

वि.सं. १४४६ मे शुरू किये गए इस मन्दिर का निर्माणकार्य जब ५० साल बीत जाने पर भी पूरा न हो सका, तब श्रेष्ठी धरणाशाह ने अपनी वृद्धावस्था का विचार करके, मन्दिर की प्रतिष्ठा करवाने का निश्चय किया।

यह प्रतिष्ठा वि.सं. १४९६ की साल में हो सकी। मन्दिर के मुख्य शिलालेख में यही साल लिखी हुई है। यह प्रतिष्ठा आचार्य श्री सोमसुन्दरसूरिजी के हाथों से हुई थी। इस प्रकार लगातार पचास वर्षो तक मन्दिरनिर्माण का कार्य चलता रहा; फलस्वरूप मंत्री धरणाशाह की भावना को हू-ब-हू प्रस्तुत करता, देवविमान सद्दश मनोहर जिनमंदिर का इस धरती पर अवतरण हुआ। प्रचलित किंवदंती के अनुसार इस मन्दिर के निर्माण में निन्यानवे लाख रुपये खर्च हुए थे। ऐसा कहा जाता है की इस मन्दिर की नींव में सात प्रकार की धातुएं एवं कस्तूरी जैसी मूल्यवान चीजें डलवा कर शिल्पी देपा ने धरणाशाह की भावना तथा उदारता की कसौटी की थी।

यह मन्दिर इतना विशाल और ऊँचा होने पर भी इसमें नजर आती सप्रमाणता, मोती, पन्ने, हीरे, पुखराज और नीलम की तरह जगह-जगह बिखरी हुई शिल्पसमृद्धि विविधप्रकार की नक्काशी से सुशोभित अनेकानेक तोरण और उन्नत स्तंभ, आकाश में निराली छटा बिखेरतें शिखरों की विविधता-कला की यह सब समृद्धि मानो मुखरित बनकर यात्री को मंत्रमुग्धबना देती है; साथ ही मन्दिर के निर्माता के द्वारा दिखाये गये असाधारण कलाकौशल्य के लिये उसके अंत:करण में आदर और अहोभाव पैदा करती है।

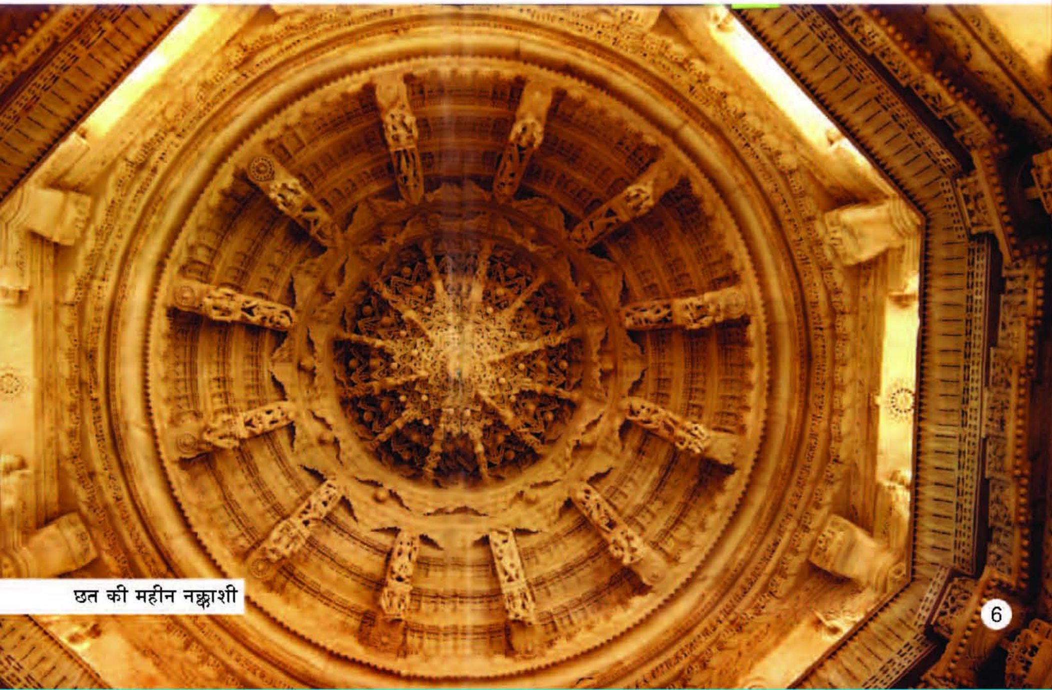

छत की महीन नक्काशी

आबु के मन्दिर अपनी सूक्ष्म नक्कासी के लिये प्रख्यात हैं, तो राणकपुर के मन्दिर की नक्काशी भी कुछ कम नहीं हैं; फिर भी प्रेक्षक का जो विशेष ध्यान आकर्षित करती है, वह है इस मन्दिर की प्रमाणोपेत विशालता। इसी से तो जनसमूह में "आबू की कोरणी और राणकपुर की मांडनी" यह बात प्रसिद्ध हुई है।

काल व प्रकृतिनिर्मित क्षीणता एवं विदेशियों के आक्रमण आदि के कारण, समय के बीतने पर, यह तीर्थ जीर्ण हो गया; वहाँ पहुँचने का मार्ग वीरान व दुर्गम हो गया; शेर जैसे हिंसक पशुओं का भय बढ़ गया; और वैसी परिस्थिति के निर्माण हो जाने से, इस तीर्थ में पहुँचना मुश्किल हो गया; फलतः इस तीर्थ के यात्रियों की संख्या बहुत कम हो गई, और तीर्थ एकदम उपेक्षित हो गया।

सौभाग्य से वि.सं. १९५३ (सन् १८९६)में, सादड़ी के श्रीसंघ ने यह तीर्थ सेठ आणंदजी कल्याणजी की पेढ़ी को सुपुर्द कर दिया। यात्रिकगण इस तीर्थ को यात्रा के लिये बिना चिन्ता-भय के जा सके इसके लिये आवश्यक प्रबंधकिये। तत्पश्चात पेढ़ी ने इस तीर्थ का संपूर्ण जीर्णोद्धार करवाने का निश्चय किया, और शीघ्र ही जीर्णोद्धार का कार्य शुरु करवाया। जीर्णोद्धार का कार्य वि.सं. १९९० से २००१ तक ग्यारह साल पर्यंत चलता रहा। यह कार्य इतना उच्च कोटि का व आदर्श हुआ कि विश्वविश्रुत स्थपतियों ने भी उसकी खुले मन से तारीफ़ की। जीर्णोद्धार के द्वारा एकदम नूतन रूप धारण करनेवाले इस मन्दिर की पुनः प्रतिष्ठा वि.स. २००९ में करवाई गई।

इसके बाद तीर्थ मे यात्रिक सुविधा से रुक सकें इस हेतु से नई-नई धर्मशालायें बनवाई गई। जहाँ पुराने ढंग की सिर्फ एक ही धर्मशाला थी, वहाँ आज अन्य बहुत सी धर्मशालायें बनी, जिनमें से दो तो आधुनिक सुविधाओं से संपन्न है। इसके कारण, जैसे जैसे समय बीतता जाता है वैसे वैसे, इस तीर्थ की ख्याति, देश-विदेश में बढ़ती जाती है, और इस तीर्थ के दर्शनार्थ आनेवाले देश-विदेश के जैन-जैनेत्तर

इस मन्दिर के शिखरों, गुँबदों और छतों में भी कलाविज्ञ और भक्तिशील शिल्पियों की मुलायम छेनियों ने कई पुरातन कथाप्रसंगों को सजीव किया है; कई आकृतियों को वाचा प्रदान की है और कई नये शिल्प अंकित किये हैं। इन सब कलाकृतियों का मर्म हृदयंगम होने पर दर्शनार्थी मानों स्थल, काल आदि को भूल ही जाता है और इन मूक दिखाई देनेवाली जीवंत-सी आकृतियों की कथा को जानने-समझने में तन्मय हो जाता है। इस मन्दिर में स्थित सहस्त्रफणा पार्श्वनाथ तथा सहस्त्रकूट के कलापूर्ण शिलापट्ट भी यात्रिक के चित्त को बरबस मोह लेते हैं।

मन्दिर की सबसे अनूठी व अनुपम विशेषता है उनकी विपुल स्तंभावली। इस मन्दिर को स्तंभों का महानिधिया स्तंभो का नगर कह सकें, इस तरह जगह जगह पर खंभे खड़े किये गये हैं। जिस और निगाह डालें उस ओर छोटे, बडे, मोटे, पतले, सादे या नक्कासी से उभरे हुए स्तंभ नजर आते हैं। मन्दिर के कुशल शिल्पियों ने इतने सारे स्तंभों की सजावट ऐसे नियोजित ढंग से की है कि, प्रभु के दर्शन करने में ये कहीं भी बाधारूप नहीं बनते। मन्दिर के किसी भी कोने में खड़ा हुआ भक्त प्रभु के दर्शन पा सकता हैं। स्तंभो की इतनी विपुल समृद्धि से ही तो इस मन्दिर में १४४४ खंभे होने की बात प्रसिद्ध है।

इस मन्दिर के उत्तर की ओर रायण वृक्ष एवं भगवान ऋषभदेव के चरण हैं। ये भगवान ऋषभदेव के जीवन तथा तीर्थाधिराज शत्रुंजय का स्मरण दिलाते है।

मन्दिर को जैसे मंज़िलों से रमणीय बनाया गया है, उसी तरह कतिपय (संभवत: नौ) तलघर बनाकर आपत्तिकाल के समय, परमात्मा की प्रतिमाओं का रक्षण हो सके वैसी दूरदर्शी व्यवस्था भी की गई है। मन्दिर की मजबूती के लिये भी ये तलघर शायद उपयोगी सिद्ध हुए होगें; और काल के प्रभाव के सामने मन्दिर को टिकाये रखने में भी उपयोगी बने होंगे। इन तलघरों में बहुत सी जिन प्रतिमायें रखी गई हैं।

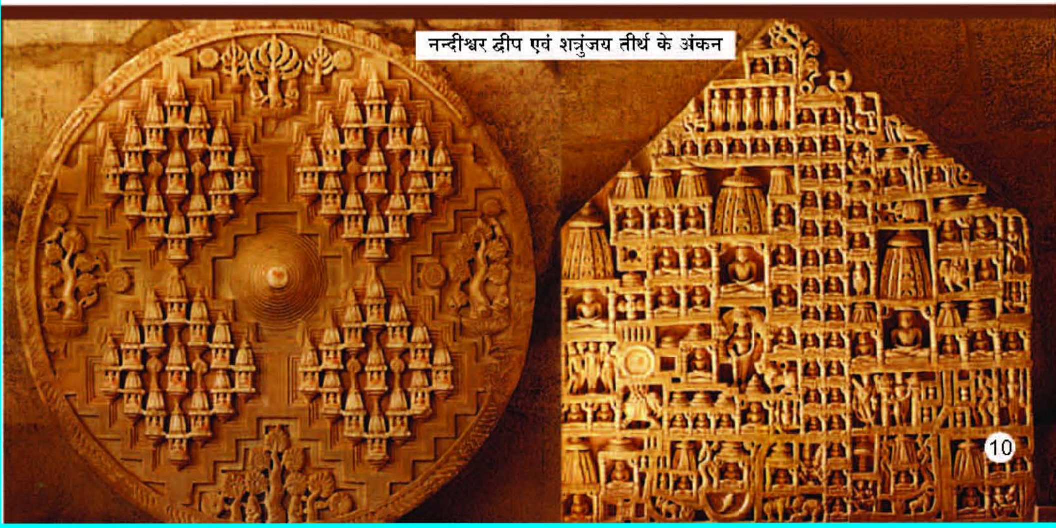
नन्दीश्वर द्वीप एवं शत्रुंजय तीर्थ के अंकन

इस मन्दिर के चार द्वार है। मन्दिर के मूल गर्भगृह में चारों दिशाओं से दर्शन देनेवाली भगवान आदिनाथ की बहत्तर इंच की विशाल और भव्य चार प्रतिमायें बिराजमान हैं। दूसरे और तीसरे मंजिल के गर्भगृह में ही इसी तरह से चार चार जिनप्रतिमायें प्रतिष्ठित हैं। इसलिये यह मन्दिर "चतुर्मुख जिनप्रासाद" के नाम से भी पहचाना जाता है।

छिहत्तर छोटी शिखरबन्द देवकुलिकायें, रंगमंडप तथा शिखरों से मंडित चार बड़ी देवकुलिकायें और चारों दिशाओं में रहे हुए चार महाधरप्रासाद-इस प्रकार कुछ चौरासी देवकुलिकायें इस जिन-भवन में है-मानो ये संसारी आत्मा को चौरासी लाख जीव-योनियों से व्याप्त भवसागर को पार कर के मुक्त होने की प्रेरणा देती हैं।

चार दिशा में आये हुए चार मेघनाद मंडपों की तो जोड़ ही मुश्किल हैं। सूक्ष्म सुकुमार और सजीवन नक्काशी से सुशोभित लगभग चालीस फीट ऊँचे स्तंभ, बीच-बीच में मोतियों की मालाओं से लटकते हुए सुन्दर तोरण, गुँबद में जड़ी हुई देवियों की सजीव पुतलियाँ और उभरी हुई नक्काशी से युक्त लोलक से शोभित गुँबद-यह सब दर्शक को मुग्धकर देता है।

आकाश में चारों और चमकते हुए अनगिनत सितारों की तरह, मन्दिर में जगह जगह बिखरा हुआ और शिल्प तो ठीक केवल मेघनाद मंडप की शिल्पकला-समृद्धि ही यात्री के मन से प्रशंसा के पुष्प प्रस्फुटित करने के लिए पर्याप्त हैं। मेघनाद मंडप में से स्वस्थ-शांत-एकांत चित्त से प्रभु-मूर्ति के मनभर दर्शन करता हुआ मनुष्य विराट परम-आत्मा के सम्मुख स्वयं कितनी अल्प आत्मा है, इसकी अनुभूति प्राप्त करके खुद के अहं तथा अभिमान को गला देने की भावना का अनुभव करता है। यात्रिकगण को इसी भाव का स्मरण कराती हैं; मेघनाद मंडप में प्रवेश करते समय बायें हाथ के एक स्तम्भ पर मंत्री धरणाशाह और शिल्पी देपा की प्रभुसम्मुख तराशी हुई आकृतियाँ। इन दोनों महानुभावों को देखते हैं तो मंत्री की भक्ति की कला और स्थपति की कला की भक्ति के सामने व सिर झुके बिना नहीं रहता।

कालीय नागदमन का बेनमून शिल्प

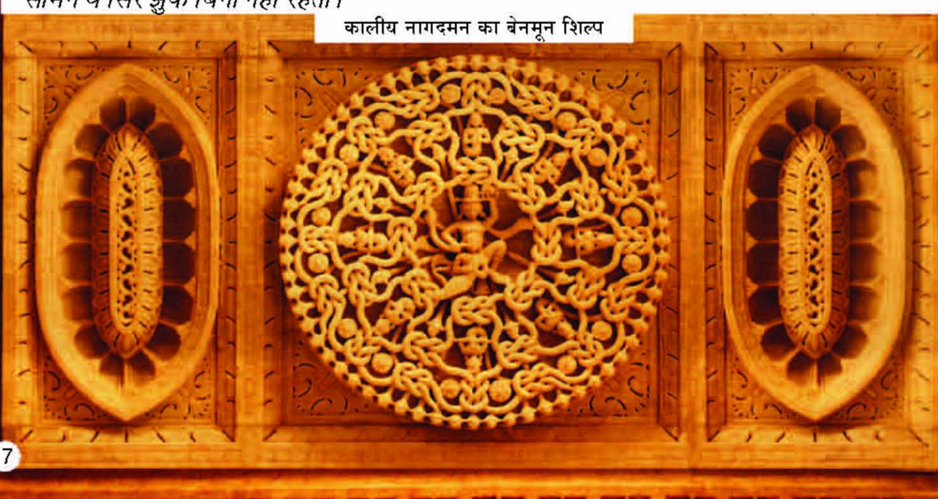

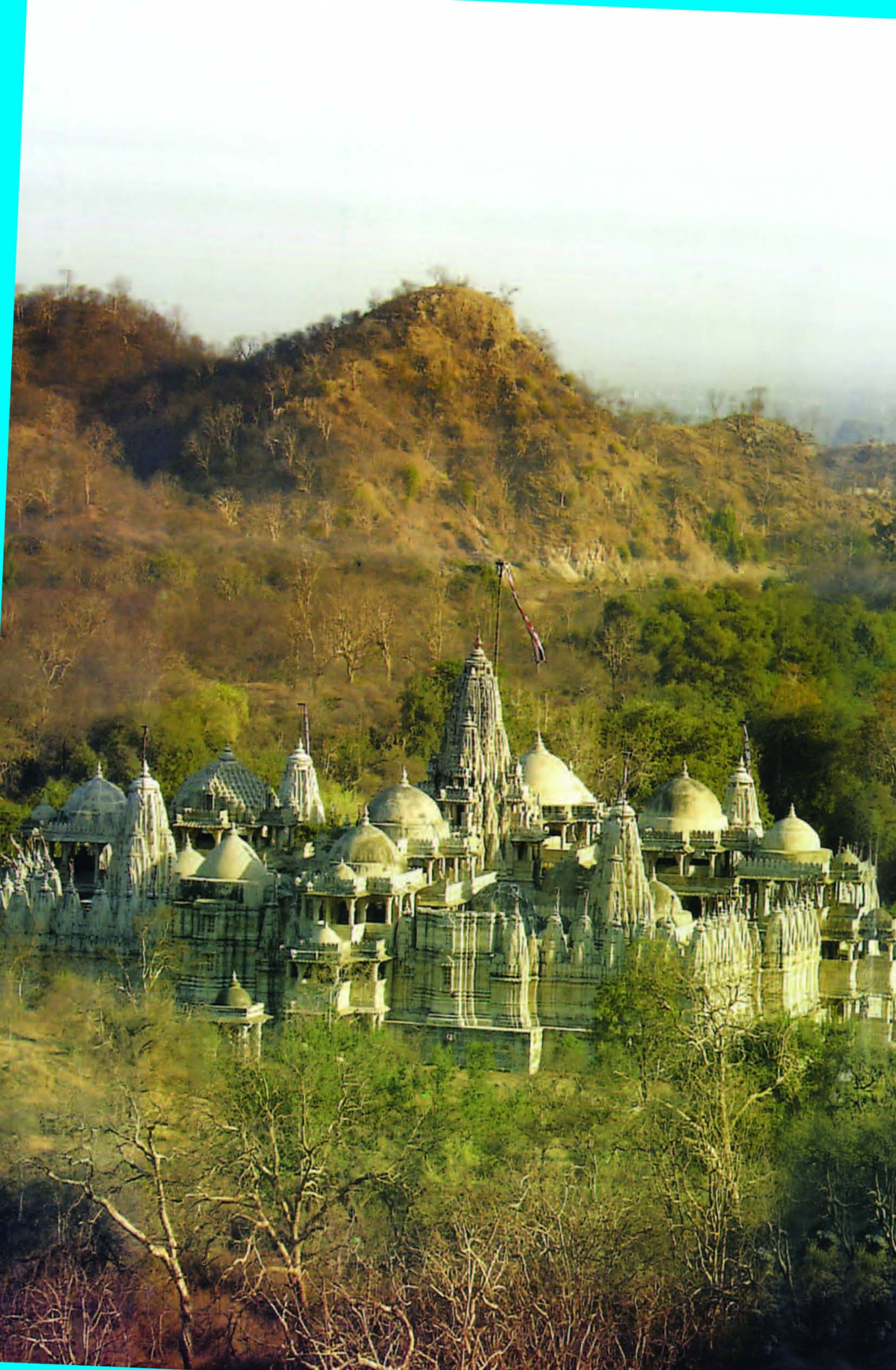

महराबें तराशकर बनायी गयी है। भव्यतम शिल्प का यह नमूना है। गर्भगृह के दोनों ओर करीबन २५० / २५० किलोग्राम वजन के दो घंट लटकाये गये है। इन दोनों की संयुक्त ध्वनि ॐ का नाद प्रसारित करती है। ये दोनों घंट पुरुष-ऊर्जा और स्त्री ऊर्जा के प्रतीक माने जाते है, इन पर षट्कोण इत्यादि भौमितिक आकृतियों एवं आंकडों से मंत्र-तंत्र के प्रतीक भी रचाये गये है।

(११) यहाँ पर एक शिल्प में रायण वृक्ष की रचना व उसके नीचे भगवान आदिनाथ की चरण पादुका दर्शायी गयी है। यहाँ पर स्थित रायण वृक्ष की स्थापना करीबन ५०० वर्ष पूर्व मंदिर के निर्माण के समय की गयी थी।

(१२) यहाँ पर एक त्रिकोण पत्थर में जैनों के परम पवित्र तीर्थस्थान शत्रुंजयगिरि (पालीताणा) को दर्शाया गया है। प्रत्येक जैन की भारी आस्था इस तीर्थभूमि के साथ जुड़ी हुई है।

(१३) यहाँ पर स्थित एक पत्थर में मुगल शहनशाह अकबर के बारें में लिखा हुआ है। इस मुगल बादशाह ने सुप्रसिद्ध जैनाचार्य हीरविजयसूरिजी की प्रेरणा एवं उपदेश से पूरे भारत में अहिंसा धर्म का प्रचार-प्रसार करते हुए जैन तीर्थस्थानों को विशेष सुरक्षा एवं स्वतंत्र व्यवस्था प्रदान की थी।

(१४) इस तीर्थ की विशेष कलाकृति के रुप में हजार सर्पो से लिपटे हुए जैनधर्म के २३ वे तीर्थंकर ध्यानस्थ पार्श्वनाथ की प्रतिमा है जो इर्दगिर्द नागराज धरणेन्द्र एवं नागरानी पद्मावती से युक्त है। एक ही संगमरमर के टुकडे में शिल्पित यह स्थापत्य राणकपुर की सुंदरतम शिल्पाकृतियों में से एक है।

(१५) समय समय पर राणकपुर की यात्रा करने आये अनेक जैन साधुओं ने एवं अन्य कवियों ने इस तीर्थ के बेनमून सौन्दर्य एवं पवित्रतम् वातावरण के बारे में बहुत कुछ लिखा है। कही इसे देवविमान सा दर्शाया है तो कही इसके दर्शन के बिना मनुष्य का जीवन अधूरा है वैसा भी कहा है।

(१६) धरणाशा के भाई रत्नाशा की शिल्पाकृति भी यहाँ पर स्थित है। धरणशाह की मृत्यु के पश्चात् इन्हीं ने सारा अधूरा कार्य संपन्न करवाया था।

एक विशेष रचना के तौर पर नंदीश्वर द्वीप की शिल्प कला भी मनमोहक बनकर उभरती है। जैन भूगोल के मुताबिक नंदीश्वर द्वीप एक विशाल द्वीप है जहाँ १३/१३ के चार समूह में कुल ५२ जिनालयों की स्थापना है। स्वर्ग के देव देवी यहा उत्सव मनाने जाते हैं।

(१७) इस मुख्य मंदिर के अतिरिक्त यहां पर जैनधर्म के २२वें तीर्थंकर नेमिनाथ का मंदिर है जो कि 'सलाटों का मंदिर' के रुप में ख्यात है एवं २३ वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ का मंदिर भी हैं।

१७वीं सदी में मुगल बादशाह औरंगजेब के द्वारा जैन मंदिरों को तहस नहस कर लूटने की मुहिम का शिकार राणकपुर भी हुआ। हालाँकि मूर्तियों को बचा लिया गया, पर मंदिर और उसका पूरा परिसर खंडहर में तबदील हो गया।

इ.स. १९३४में जैन संघ की प्रतिनिधिसंस्था सेठ आणंदजी कल्याणजी की पेढी के सेठ कस्तूरभाई लालभाई ने अपने सहयोगियो के साथ राणकपुर का दौरा करने के पश्चात् अध्ययन-संशोधन व विचार विमर्श कर के सोमपुरा दलछाराम खुशालदास को मंदिर के पुनरुद्धार का कार्य सौंपा और २०० कारीगरों के साथ आरंभ हुआ यह कार्य करीबन ११ साल तक चला।

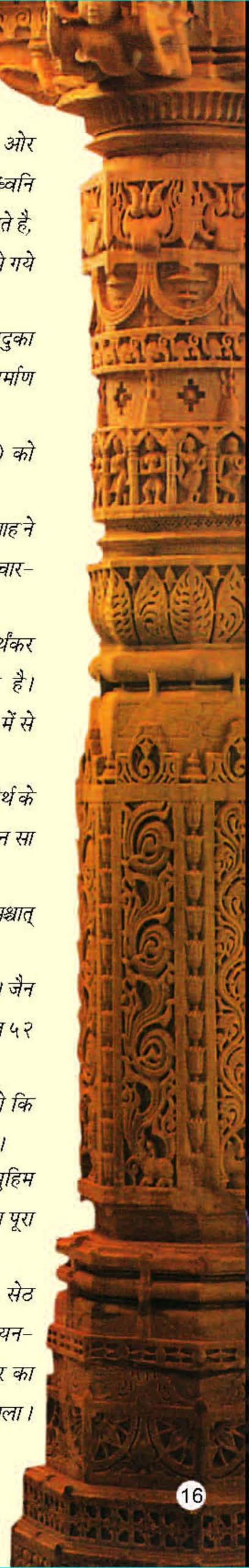

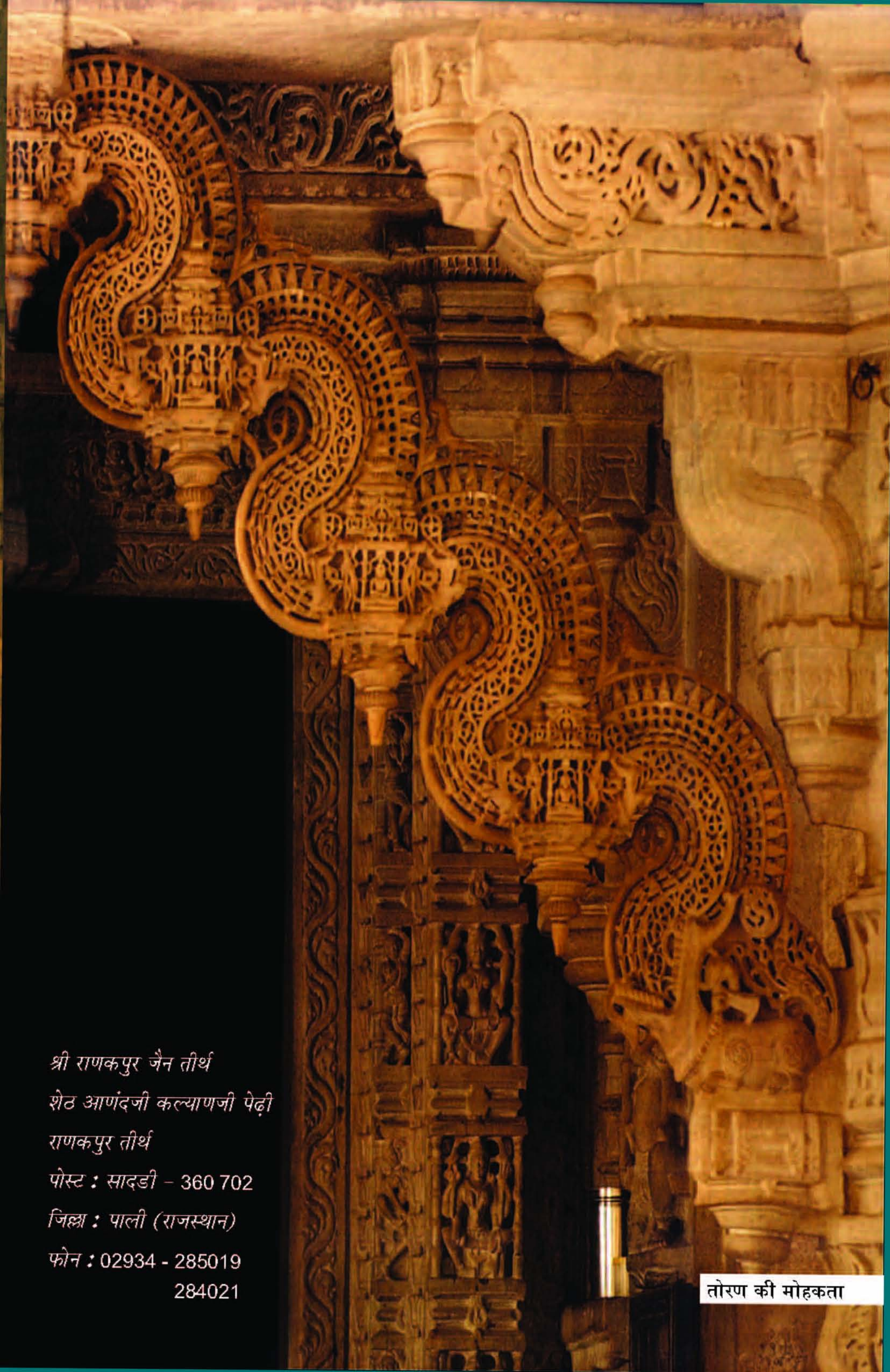

तोरण की मोहकता

श्री राणकपुर जैन तीर्थ
शेठ आणंदजी कल्याणजी पेढ़ी
राणकपुर तीर्थ
पोस्ट : सादडी – 360 702
जिल्ला : पाली (राजस्थान)
फोन : 02934 - 285019
284021

कुछ अभिप्राय

विभागों का वैविध्य, उनकी अवान्तर रचनाओं का सौन्दर्य-ऐसा सौन्दर्य कि समग्र प्रासाद में कोई भी दो खंभे एक-से नहीं है, उन विभागों की व्यवस्था की मोहकता, भिन्न भिन्न प्रकार की ऊँचाईवाले गुम्बजों का समतल छतों के साथ साधा गया सुरुचिकारी मेल और प्रकार के प्रवेश के लिये की गई योजना - ये सब मिलकर अति सुन्दर प्रभाव उत्पन्न करते हैं। सही माइने में इसकी स्पर्धा कर सके ऐसी अन्य इमारत हो, ऐसा मैं नहीं जानता, कि जो खूब आह्लादकारक असर डालती हो, या जो अंदरूनी विभाग में खड़े किये गये खंभो की आकर्षक योजना के दर्शन करने का मौका देती हो।

- जेम्स फरग्युसन (भारत के विख्यात पुरातत्त्ववेत्ता)

मंदिर में प्रवेश करते समय तो ऐसा महसूस होता है कि मानो यह सर्जन किसी ने अपने हाथों से किया हो। किन्तु अत्यंत परिश्रम से उत्कीर्ण की गई अवान्तर कृतियाँ तो, समग्र भव्य कल्पना के प्रकाश के कारणष पार्श्वभूमि में ही चली जाती हैं और जब प्रकाश के संगीत का सर्जन करनेवाले अंतरालो की अद्भूतता बराबर हू-ब-हू होकर स्थिर हो जाती है, तदनन्तर ही अवान्तर कृतियों की शिल्पकला चित्त को मोह लेती है। सचमुच, स्थापत्यकला एवं आध्यात्मिकता की यह एक आश्चर्यजनक अभिव्यक्ति है।

- लुई कहान (अमरीका के विश्वमान्य स्थपति)

इतिहास, शिल्पकला एवं प्रकृतिमय स्थान - इन सबके कारण राणकपुर का मंदिर सर्वश्रेष्ठ बना है।

- एस. दासगुप्ता (भारत सरकार के भूस्तर-विभाग के अधिकार)

राणकपुर का मंदिर तो पाषाण में मूर्त्त हुई कल्पना है।

- कांतिलाल टी. देसाई (गुजरात के चीफ जस्टीस)

ये मंदिर तो भारतीय कला और स्थापत्य की मुद्रिका में जड़े हुए हीरे हैं।

- स्वामी कृष्णानंद (बड़ौदा)

अत्यंत प्रभावति करनेवाला शिल्पकला का एसा नमूना मैंने कहीं नही देखा।

- जे. एम. बोवन (अमरीका)

राणकपुर की सुन्दरता मनुष्य की कल्पनाशीलता और समझशक्ति से भी आगे बढ़ जाती है।

- एस. क्लेन्सी (अमरीका)

इसका मुकाबला कर सके ऐसा विश्व में कुछ नहीं है।

- सेबुर (जर्मनी)

मनुष्य के हाथ पत्थर में से ऐसा अद्भूत सर्जन कर सकते हैं, ऐसा मानना असंभवन लगता है।

सेठ आणंदजी कल्याणजी

श्रेष्ठी लालभाई दलपतभाई भवन, 25, वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड,
पालडी, अहमदाबाद - 380 007 (गुजरात)
Phone:079 2664 4502, 2664 5430 ♦ E-mail:shree_sangh@yahoo.com